[2018] 7 एस. सी. आर 1147

बिहार और ओआरएस का राज्य।

वी.

बिहार राज्य भूमि विकास बैंक समिति

(2018 की सिविल अपील संख्या 7314)

30 जुलाई, 2018

[आर. एफ. नरीमन और इंदु मल्होत्रा, जे. जे.]

मध्यस्थता और सुलह अधिनियम, 1996:

अधिनियम के वास्तविक उद्देश्य और उद्देश्य को बढ़ावा देने के लिए, प्रावधान को निर्देशिका घोषित किया जाना चाहिए। 34 (5) एक प्रक्रियात्मक प्रावधान है, जिसका उल्लंघन कोई परिणाम नहीं देता है-इस तरह का अर्थ लगाने के लिए अनिवार्य प्रावधान न्याय की प्रगति को विफल कर देगा क्योंकि यह निष्पक्षता के तत्व-क़ानूनों की व्याख्या को दफन करके न्याय की प्रक्रिया को बाधित करने का परिणाम प्रदान करेगा।

निर्णय/आदेशः

पहले के फैसले को उन कारणों को परेशान किए बिना खारिज नहीं किया जा सकता है जिन पर यह आधारित है।

अपील को अनुमति देते हुए, न्यायालय ने

पकड़नाः 1.1 मध्यस्थता और सुलह अधिनियम, 1996 की धारा 34 (5) एक प्रक्रियात्मक प्रावधान है, जिसका उल्लंघन कोई परिणाम नहीं देता है। प्रावधान के पीछे का उद्देश्य है धारा 34 के तहत आवेदनों का शीघ्रता से निपटान करना। प्रक्रिया के सभी नियम न्याय के सहायक होते हैं और यदि न्याय के उद्देश्य को आगे बढ़ाने में यह स्पष्ट किया जाता है कि इस तरह के प्रावधान को निर्देशिका के रूप में माना जाना चाहिए, तो ऐसा ही हो। इस तरह के प्रावधान को अनिवार्य मानने से इसकी प्रगति विफल हो जाएगी।

न्याय क्योंकि यह धारा 34 (5) की आवश्यकताओं का पालन किए बिना दायर किए गए आवेदन को खारिज करने का परिणाम प्रदान करेगा, जिससे निष्पक्षता के तत्व को दफन करके न्याय की प्रक्रिया में बाधा आएगी। [पैरा 20 और 22] [1163-एफ-जी; 1165-ए-बी]

1.2 सुविधा और न्याय पर विचार

सर्वोच्च, और यदि सामान्य असुविधा या अन्याय होता है,

अधिनियम के वास्तविक उद्देश्य और उद्देश्य को बढ़ावा दिए बिना, प्रावधान को निर्देशिका घोषित किया जाना चाहिए। [पैरा 19] [1163-ई]

1.3 धारा 34 (1) में एकमात्र आवश्यकता यह है कि किसी पुरस्कार को अलग करने के लिए आवेदन निम्नलिखित के अनुसार होना चाहिएः

धारा 34 के तहत आवेदनों पर निर्णय लेने में देरी को कम करें। [पैरा 23] [1165-डी-ई] 1.4 यह एस से स्पष्ट है। 29 ए कि धारा 34 (5) और (6) के विपरीत, यदि कोई पुरस्कार निर्धारित या विस्तारित से परे किया जाता है

धारा में निहित अवधि, मध्यस्थ के अधिदेश को समाप्त किए जाने का परिणाम स्पष्ट रूप से प्रदान किया गया है। यह प्रावधान धारा 34 (5) और (6) के बिल्कुल विपरीत है, जहां धारा 34 के तहत आवेदन पर निर्णय लेने की अवधि है -

बीत जाने पर कोई परिणाम प्रदान नहीं किया जाता है। यह एक और संकेतक है।

1.5 इसलिए, यह सही नहीं है कि धारा 34 (5) धारा 34 (6) से स्वतंत्र है और अपने आप में कानून की एक अनिवार्य आवश्यकता है। एस की उप-धारा (6)। 34 यह उस तारीख को संदर्भित करता है जिस दिन उप-धारा (5) में निर्दिष्ट सूचना दूसरे पक्ष को दी जाती है। यह इस कारण से है कि आवेदन दाखिल करने की पूर्व तिथि एक की अवधि का प्रारंभिक बिंदु होना चाहिए। धारा 34 (6) में निर्दिष्ट वर्ष। भले ही उप-धारा (5) को उप-धारा (6) से स्वतंत्र प्रावधान माना जाए, लेकिन कानून में वही परिणाम परिणाम है- अर्थात्, यदि ऐसी पूर्व सूचना जारी नहीं की जाती है तो कोई परिणाम प्रदान नहीं किया जाता है।

[पैरा 25] [1166-एफ-जी]

1.6 प्रत्येक न्यायालय, जिसमें धारा 34 का आवेदन दायर किया जाता है, का यह प्रयास होगा कि आवेदक द्वारा या न्यायालय द्वारा, जैसा भी मामला हो, विरोधी पक्ष को नोटिस की सेवा की तारीख से एक वर्ष की समय सीमा तक बने रहें। यदि न्यायालय धारा 34 (3) में उल्लिखित अवधि बीत जाने के बाद नोटिस जारी करता है, तो प्रत्येक न्यायालय इसका निपटारा करने का प्रयास करेगा।

धारा 34 बिहार राज्य और ORS.v की तारीख से एक वर्ष की अवधि के भीतर आवेदन।

बिहार राज्य भूमि विकास बैंक समिति

वाणिज्यिक न्यायालयों, वाणिज्यिक प्रभाग और उच्च न्यायालय अधिनियम, 2015 के वाणिज्यिक अपीलीय प्रभाग की धारा 14 में जो प्रावधान किया गया है, उसके समान ही उक्त आवेदन दाखिल करना। यह उस उद्देश्य को प्रभाव देगा जिसे प्राप्त करने की इच्छा है

2015 के संशोधन अधिनियम द्वारा धारा 13 (6) को जोड़ा गया। [पैरा 27] [1168-बी-सी]

1.7 धारा 14 के साथ पठित धारा 10 द्वारा कवर किए गए मामलों में

वाणिज्यिक न्यायालय, वाणिज्यिक प्रभाग और उच्च न्यायालय अधिनियम, 2015 का वाणिज्यिक अपीलीय प्रभाग, वाणिज्यिक अपीलीय प्रभाग अपने समक्ष दायर अपीलों का छह महीने के भीतर, जैसा कि निर्धारित किया गया है, निपटान करने का प्रयास करेगा। जिन अपीलों को इस तरह से शामिल नहीं किया गया है, उनका भी जल्द से जल्द निपटान किया जाएगा, अधिमानतः उस तारीख से एक साल के भीतर जिस दिन अपील दायर की गई है। [पैरा 28] [1168-डी, ई]

कैलाश वी. नन्हकू और ओआरएस। (2005) 4 एससीसी 480:

[2005] 3 एससीआर 289; टॉपलाइन शूज़ बनाम। निगम बैंक

(2002) 6 एससीसी 33: [2002] 3 एस. सी. आर. 1167; सलेम अधिवक्ता

बार एसोसिएशन बनाम। भारत संघ (2005) 6 एससीसी

344 [2005] 1 पूरक। एस. सी. आर. 929; न्यू इंडिया एस्योरेंस

कं. लिमिटेड बनाम। हिल्ली बहुउद्देशीय शीत भंडारण प्रा. लि.

(2015) 16 एससीसी 20; जे. जे. मर्चेंट (डॉ.) बनाम श्रीनाथ

चतुर्वेदी (2002) 6 एससीसी 635: [2002] 1 पूरक। एससीआर

बिहारी चौधरी और अन्र। वी. बिहार राज्य और अन्य, (1984) 2 एससीसी 627: [1984] 3 एस. सी. आर. 309-संदर्भित।

2. पहले के फैसले को चुप रहने के बाद खारिज नहीं किया जा सकता है।

उन कारणों को परेशान किए बिना जिन पर यह आधारित है। [पैरा 17] [1161-एच; 1162-ए]

क़ानूनों की व्याख्या पर मैक्सवेल 10 वीं संस्करण। पी. 376

संदर्भित किया गया।

मामला कानून संदर्भ

[2005] 3 एससीआर 289

उस पर भरोसा करें

पै

रा 4

[2002] 3 एससीआर 1167

उस पर भरोसा करें

पै

रा 11

[2005] 1 पूरक। एससीआर 929

उस पर भरोसा करें

पैरा

13 [2018] एस. सी. आर.

सर्वोच्च न्यायालय की रिपोर्ट

(2015) 16 एससीसी 20

उस पर भरोसा करें

पैरा

14

[2002] 1 पूरक। एससीआर 469

उस पर भरोसा करें

पैरा

14

(2013) 3 एस. सी. सी. 594

उस पर भरोसा करें

पैरा

18

[1962 [2 एससीआर 880

उस पर भरोसा करें

पै

रा 19

[1984] 3 एससीआर 309

संदर्भित किया गया है

पैरा

21

सिविल अपीलीय न्यायनिर्णयः सिविल अपील सं. 7314

2018 से।

उच्च न्यायालय के 28.10.2016 दिनांकित निर्णय और आदेश से

2016 के पत्र पेटेंट अपील सं. 1841 में पटना में न्यायिक कार्य।

नागेंद्र राय, पराग पी. त्रिपाठी, वरिष्ठ अधिवक्ता। , गोपाल सिंह, मनीष

कुमार, सुश्री अपराजित सूद, जयंत कुमार मेहता, राजेश के. सिंह, राजेश प्रसाद चौधरी, सुवेनी भगत, सुश्री मिशिका बाजपेयी, अधिवक्ता। उपस्थित दलों के लिए।

न्यायालय का निर्णय इसके द्वारा दिया गया था

आर. एफ. नरीमन, जे. 1. छुट्टी दे दी गई।

2. इस अपील में उठाया गया प्रश्न इस बात से संबंधित है कि क्या धारा

34 (5) 2016 के संशोधन अधिनियम 3 (23 अक्टूबर, 2015 से) द्वारा अंतःस्थापित मध्यस्थता और सुलह अधिनियम, 1996 अनिवार्य या निर्देशिका है।

3. वर्तमान अपील एक मध्यस्थता कार्यवाही से उत्पन्न होती है जो

24.05.2015 पर शुरू हुआ। 06.01.2016 पर एक मध्यस्थता पुरस्कार दिया गया था। उक्त पुरस्कार को चुनौती देने वाली धारा 34 याचिका पटना उच्च न्यायालय के समक्ष 05.04.2016 पर दायर की गई थी, जिसमें न्यायालय द्वारा 18.07.2016 पर विरोधी पक्ष को नोटिस जारी किया गया था। धारा 34 (5) के लागू होने के बावजूद, पक्षों के बीच सामान्य आधार यह है कि उक्त धारा के संदर्भ में दूसरे पक्ष को कोई पूर्व सूचना जारी नहीं की गई थी, न ही धारा 34 के तहत आवेदन एक हलफनामे के साथ था जो उक्त उप-धारा द्वारा आवश्यक था।

4. पटना उच्च न्यायालय के एक विद्वान एकल न्यायाधीश, एक निर्णय द्वारा

दिनांक 06.09.2016, ने अभिनिर्धारित किया कि धारा 34 (5) में निहित प्रावधान केवल निर्देशिका थी, कैलाश बनाम में हमारे निर्णय के बाद। नन्हकू और ओआरएस। ,

(2005) 4 एससीसी 480। एक डिवीजन बेंच को एक लेटर्स पेटेंट अपील ने दिनांकित 28.10.2016 का विवादित आदेश दिया, जिसके द्वारा यह अभिनिर्धारित किया गया था, विधि आयोग की रिपोर्ट को जोड़ते हुए, जिसके कारण 2015 का संशोधन हुआ, कि बिहार राज्य & ORS.v।

धारा 34 (5) की अनिवार्य भाषा, अपने उद्देश्य के साथ, यह स्पष्ट करती है कि उप-धारा धारा 34 के तहत एक उचित आवेदन दाखिल करने के लिए एक पूर्ववर्ती शर्त थी, और सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 की धारा 80 के तहत जारी एक नोटिस के सादृश्य पर,

इसका अनुपालन किया गया और चूंकि 120 दिनों की अवधि समाप्त हो गई थी, इसलिए धारा 34 के आवेदन को ही खारिज करना होगा। अंत में, इसने अपील की अनुमति दी और विद्वान एकल न्यायाधीश के फैसले को रद्द कर दिया। 5. अपीलार्थियों की ओर से उपस्थित विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता श्री नागेंद्र राय ने तर्क दिया है कि लेटर्स पेटेंट अपील स्वयं थी

रखरखाव योग्य नहीं है। उन्होंने आगे तर्क दिया कि किसी भी स्थिति में, धारा 34 (5) और (6) एक समग्र योजना का हिस्सा हैं, जिसका उद्देश्य यह है कि धारा 34 के तहत एक आवेदन का एक वर्ष के भीतर तेजी से निपटान किया जाए। वह बताते हैं कि यदि इस तरह के आवेदन का निपटान एक वर्ष की उक्त अवधि के भीतर नहीं किया जाता है, तो कोई परिणाम प्रदान नहीं किया जाता है, उपरोक्त प्रावधान केवल निर्देशिका हैं, इसमें उपयोग की जाने वाली भाषा की अनिवार्य प्रकृति के बावजूद। उन्होंने यह भी कहा कि प्रक्रियात्मक प्रावधानों का इस तरह से अर्थ नहीं लगाया जाना चाहिए कि न्याय ही कुचला जाए। इस उद्देश्य के लिए, उन्होंने इस न्यायालय के विभिन्न निर्णयों का उल्लेख किया और उन पर भरोसा किया।

6. प्रत्यर्थी की ओर से पेश हुए विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता श्री पराग पी. त्रिपाठी ने उच्च न्यायालय के फैसले का बचाव किया, दोनों में रखरखाव के साथ-साथ धारा 34 (5) एक अनिवार्य प्रावधान है। विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता के अनुसार, इस तथ्य के बावजूद कि नहीं परिणाम प्रदान किया गया है यदि धारा 34 (6) की समय अवधि जाती है, फिर भी, एक आवेदन जो धारा 34 (5) में निर्धारित पूर्ववर्ती शर्त का पालन किए बिना धारा 34 के तहत दायर किया जाता है, एक ऐसा आवेदन है जो गैर-कानूनी है। उन्होंने आगे तर्क दिया कि इसलिए, निम्नलिखित परिणाम धारा 34 की उप-धारा (6) से नहीं बल्कि उसकी उप-धारा (3) से आता है, जिसके तहत, इस तरह के आवेदन पर विचार नहीं किया जा सकता है यदि यह निर्धारित अवधि और/या धारा 34 (3) में उल्लिखित विस्तारित अवधि से अधिक है। उन्होंने विधि आयोग की रिपोर्ट पर भरोसा किया जिसके कारण 2015 का संशोधन हुआ, साथ ही साथ धारा 34 (5) की भाषा की अनिवार्य प्रकृति पर भी भरोसा किया। इसके अलावा, विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता के अनुसार, अधिकांश उच्च न्यायालयों ने इस प्रावधान को अनिवार्य माने जाने के पक्ष में फैसला किया है, बॉम्बे उच्च न्यायालय द्वारा एकमात्र विसंगत टिप्पणी की जा रही है।

सर्वोच्च न्यायालय की रिपोर्ट

7. धारा 34 (5) और (6) यहाँ नीचे दी गई हैः

" 34. मध्यस्थता पुरस्कार को अलग रखने के लिए आवेदन। XXX XXX XXX

(5) इस धारा के तहत एक आवेदन एक पक्ष द्वारा दूसरे पक्ष को पूर्व सूचना जारी करने के बाद ही दायर किया जाएगा और इस तरह के आवेदन के साथ आवेदक द्वारा उक्त आवश्यकता के अनुपालन का समर्थन करने वाला एक हलफनामा होगा।

(6) इस धारा के तहत एक आवेदन का निपटारा किया जाएगा। शीघ्रता से, और किसी भी स्थिति में, उस तारीख से एक वर्ष की अवधि के भीतर जिस दिन उप-धारा (5) में निर्दिष्ट सूचना दूसरे पक्ष को दी जाती है।

8. इसमें कोई संदेह नहीं है कि धारा 34 की भाषा

श्री त्रिपाठी के तर्क के समर्थन में खुद को उधार दें, क्योंकि

उपयोग किए गए सार हैं "होगा", "केवल उसके बाद" और "पूर्व सूचना" ऐसे आवेदन के साथ जो फिर से एक शपथ पत्र के साथ होगा।

आर. एस. आई. जी. अनुपालन।

9. 246 वें विधि आयोग की रिपोर्ट, जिसने प्रस्तुत किया

कहा गया प्रावधान, पढ़ने को भी दिलचस्प बनाता है, जिसे निर्धारित किया गया है

नीचेः

" 3. मध्यस्थता और सुलह अधिनियम, 1996 (इसके बाद)

" अधिनियम ") पर UNCITRAL मॉडल कानून पर आधारित है

अंतर्राष्ट्रीय वाणिज्यिक मध्यस्थता, 1985 और

UNCITRAL सुलह नियम, 1980। अधिनियम अब है

लगभग दो दशकों से लागू, और इस अवधि में,

हालांकि मध्यस्थता तेजी से अक्सर चुने गए मध्यस्थ के रूप में उभरा है।

मुकदमेबाजी के विकल्प के रूप में, यह विभिन्न प्रकार से पीड़ित हो गया है

उच्च लागत और देरी सहित समस्याएं, जिससे यह

न तो पहले की व्यवस्था से बेहतर जिसे वह बदलने का इरादा रखता था; या मुकदमेबाजी के लिए, जिसे वह प्रदान करने का इरादा रखता है

वैकल्पिक। विलम्ब मध्यस्थता प्रक्रिया में अंतर्निहित हैं,

अदालतें कुछ मुद्दों को अंतिम रूप देने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं। जो मध्यस्थता से पहले, बाद में और यहां तक कि मध्यस्थता के दौरान भी उत्पन्न होता है,

मध्यस्थता संबंधी मुकदमेबाजी का एक गंभीर खतरा मौजूद है

अदालतों के समक्ष लंबित मामलों की विशाल सूची में पकड़ा गया।

पुरस्कार के बाद, धारा 34 के तहत एक चुनौती पुरस्कार बनाती है।

इस तरह की याचिकाएं कई वर्षों से लंबित हैं

वर्षों से। त्वरित वैकल्पिक विवादों के समाधान का उद्देश्य

अक्सर निराश हो जाता है।

4. इसलिए, कुछ संशोधनों की तत्काल आवश्यकता है।

इन समस्याओं से निपटने के लिए अधिनियम के प्रावधान जो अक्सर

मध्यस्थता प्रक्रिया में उत्पन्न होता है। इस अध्याय का उद्देश्य है -

में सुझाए गए परिवर्तनों की नींव रखने के लिए

आयोग की रिपोर्ट। सुझाए गए संशोधनों का पता

विभिन्न प्रकार के मुद्दे जो मध्यस्थता की वर्तमान व्यवस्था को परेशान करते हैं

भारत में और इसलिए, संशोधनों को निर्धारित करने से पहले, यह

संशोधनों का उद्देश्य उपचार करना है और संदर्भ जिसमें उक्त समस्याएं उत्पन्न होती हैं और इसलिए संदर्भ जिसमें उनके

समाधान देखने की जरूरत है। XXX XXX XXX

25. इसी तरह, आयोग ने पाया है कि धारा 34 और 48 के तहत मध्यस्थता पुरस्कार समान रूप से हैं

कई वर्षों तक लंबित रहा। इस संदर्भ में आयोग ने

धारा 34 (5) और 48 (4) को जोड़ने का प्रस्ताव है जो

यह आवश्यक है कि उन धाराओं के तहत एक आवेदन होगा

शीघ्रता से और किसी भी स्थिति में निपटाया गया

नोटिस की सेवा की तारीख से एक वर्ष। के मामले में

अधिनियम की धारा 48 के तहत आवेदन, आयोग ने

आगे धारा 48 (3) के तहत एक समय सीमा प्रदान की गई है, जो धारा 34 (3) में निर्धारित समय सीमाओं को दर्शाती है, और इसका उद्देश्य यह सुनिश्चित करना है कि

कि पक्ष इस धारा के तहत अपने उपायों को गंभीरता से लेते हैं

और न्यायिक मंच से शीघ्रता से संपर्क करें, न कि किसी तरह से

एक विचार के बाद

10. इसमें कोई संदेह नहीं है कि धारा 34 (5) और (6) का उद्देश्य है -

विधि आयोग द्वारा यह अपेक्षा व्यक्त की गई है कि

धारा 34 के तहत राशन का निपटान एक अवधि के भीतर तेजी से किया जाए।

ई-नोटिस की सेवा की तारीख से वर्ष। इस तथ्य को ध्यान में रखते हुए कि यदि धारा 34 (6) के तहत एक वर्ष की समय सीमा निर्धारित की जाती है, तो इसका कोई परिणाम प्रदान नहीं किया जाता है, हमें इस बात की जांच करनी होगी कि क्या यह अपने आप में धारा 34 (5) को विलंब के रूप में समझने के लिए पर्याप्त है।

सर्वोच्च न्यायालय की रिपोर्ट

11. इस न्यायालय के कुछ निर्णय काफी प्रकाश डालते हैं।

नीलार प्रावधानों को प्रकृति में केवल निर्देशिका के रूप में माना जा रहा है।

टॉपलाइन शूज़ वी में। निगम बैंक, (2002) 6 एस. सी. सी. 33, धारा

(क) उपभोक्ता संरक्षण अधिनियम, 1986 के उत्तर में कहा गया है कि

विरोधी पक्ष द्वारा "30 दिनों की अवधि के भीतर या इस तरह के विस्तारित

घ 15 दिनों से अधिक नहीं, जैसा कि जिला मंच द्वारा दिया जा सकता है।

न्यायालय ने उद्देश्यों और कारणों के कथन को संदर्भित किया

अंशक संरक्षण अधिनियम, 1986, जो इच्छित उद्देश्य के समान है

धारा 34 (5) और (6) में किए गए संशोधन द्वारा निहित

राशन और सुलह अधिनियम, 1996 निम्नानुसार हैः

" 8. उपभोक्ता के उद्देश्यों और कारणों का विवरण

संरक्षण अधिनियम, 1986 इंगित करता है कि इसे बढ़ावा देने के लिए अधिनियमित किया गया है और उपभोक्ताओं के अधिकारों और हितों की रक्षा करना और प्रदान करना

उनकी शिकायतों का त्वरित और सरल निवारण। इसलिए, इस उद्देश्य के लिए अर्ध-न्यायिक तंत्र की स्थापना की गई है,

विभिन्न स्तरों पर। इन अर्ध-न्यायिक निकायों को पालन करना होगा

कथन के खंड 4 के अनुसार प्राकृतिक न्याय के सिद्धांत

वस्तुएँ और कारण, जो नीचे लिखे अनुसार हैंः

" 4. उपभोक्ता को त्वरित और सरल निवारण प्रदान करना। विवादों में, एक अर्ध-न्यायिक तंत्र स्थापित करने की मांग की जाती है

जिला, राज्य और केंद्रीय स्तर। ये अर्ध-न्यायिक निकाय

प्राकृतिक न्याय के सिद्धांतों का पालन करेंगे और एक विशिष्ट प्रकृति के उत्कीर्णन देने और पुरस्कार देने के लिए सशक्त,

अर्ध-न्यायिक द्वारा दिए गए आदेशों का पालन न करने के लिए शव भी उपलब्ध कराए गए हैं।

(मूल में जोर)

इस प्रकार जवाब दाखिल करने के लिए एक समय-सीमा प्रदान करने का इरादा वास्तव में है

इस तरह के मामलों की सुनवाई में तेजी लाने और इससे बचने के लिए

कार्यवाही पर विलंब करने के लिए अनावश्यक स्थगन जवाब दाखिल करने का बहाना। हालाँकि, प्रावधान, जैसा कि तैयार किया गया है, करता है

यह इंगित नहीं करता है कि यह प्रकृति में अनिवार्य है। विस्तारित होने की स्थिति में

समय 15 दिनों से अधिक है, कोई दंडात्मक परिणाम निर्धारित नहीं हैं

इसके लिए। समय के विस्तार की अवधि "15 दिनों से अधिक नहीं",

किसी भी प्रकार की सीमा निर्धारित नहीं करता है। प्रावधान

प्रकृति में निर्देशिका प्रतीत होती है, जो उपभोक्ता मंच बिहार के कैट और ORS.v हैं।

आम तौर पर उनके सामने की कार्यवाही में आवेदन करना अपेक्षित है। हम अपीलार्थी द्वारा व्यक्तिगत रूप से किए गए समर्पण में बल नहीं पाते हैं,

अपने संस्करण को किसी भी मामले में बचाव में रखने से प्रतिबंधित किया जाए परिस्थितियाँ जो भी हों। यह फोरम या आयोग का काम है कि वह प्रावधानों के साथ सभी तथ्यों और परिस्थितियों पर विचार करे।

एक दिशानिर्देश के रूप में जवाब दाखिल करने के लिए समय-सीमा प्रदान करने वाले अधिनियम का, और फिर न्याय के उद्देश्यों को पूरा करने और प्राकृतिक न्याय के सिद्धांतों को ध्यान में रखते हुए ऐसे मामलों के त्वरित निपटान के उद्देश्य को प्राप्त करने के लिए अपने विवेकाधिकार का यथासंभव उपयोग करना। फोरम अधिनियम की धारा 13 (2) (ए) को देखते हुए 15 दिनों से अधिक समय बढ़ाने से इनकार कर सकता है, लेकिन विस्तार की 15 दिनों की अवधि से अधिक, आदेश में किसी भी घातक अवैधता का कारण नहीं बनेगा।

अदालत ने आगे कहाः

" 11. हम पहले ही देख चुके हैं कि धारा 13 की उप-धारा (2) के खंड (ए) के तहत निहित प्रावधान प्रक्रियात्मक प्रकृति का है। यह भी स्पष्ट है कि उद्देश्य को प्राप्त करने के लिए अधिनियम, कि ऐसे मामलों का शीघ्र निपटान हो सकता है, यह प्रावधान किया गया है कि जवाब 30 दिनों के भीतर दायर किया जाना है और समय का विस्तार 15 दिनों से अधिक नहीं हो सकता है। यह प्रावधान

यह परिकल्पना की गई है कि विरोधी पक्ष द्वारा अपना जवाब दाखिल किए बिना कार्यवाही को बहुत लंबे समय तक नहीं बढ़ाया जा सकता है। हालाँकि विस्तार के मामले में कोई दंडात्मक परिणाम प्रदान नहीं किए गए हैं

समय 15 दिनों से अधिक है। इसलिए, यह नहीं कहा जा सकता था कि अपीलार्थी के पक्ष में कोई मूल अधिकार अर्जित किया गया था या विस्तारित समय के भीतर जवाब दाखिल करने में किसी भी प्रकार की सीमा थी, हालांकि कुल मिलाकर 45 दिनों से अधिक। जवाब को अस्वीकार करना जरूरी नहीं है। मामले के सभी तथ्यों और परिस्थितियों को ध्यान में रखा जाना चाहिए। अधिनियम के उद्देश्यों और कारणों के विवरण में यह भी प्रावधान है कि प्राकृतिक न्याय के सिद्धांतों को भी

ध्यान में रखा गया।

"[2018] 7 एस. सी. आर.

सर्वोच्च न्यायालय की रिपोर्ट

12. कैलाश (ऊपर) में, इस न्यायालय का सामना इस प्रश्न के साथ किया गया था कि 2002 के एन. डी. एम. टी. अधिनियम द्वारा सी. पी. सी. के आदेश VIII नियम 1 के संशोधन के बाद, उक्त प्रावधान को अटोरी के रूप में माना जाना चाहिए। निर्णय के अनुच्छेद 26 में प्रावधान इस प्रकार निर्धारित किया गया है -

वीएसः

" 26. आदेश 8 नियम 1 का पाठ, जैसा कि अब है, नीचे दिया गया हैः

उनके बचाव का बयानः बशर्ते कि जहां प्रतिवादी तीस दिनों की उक्त अवधि के भीतर लिखित बयान दाखिल करने में विफल रहता है, उसे लिखित रूप में दर्ज किए जाने वाले कारणों के लिए, ऐसे अन्य दिन, जो अदालत द्वारा निर्दिष्ट किया जाए, उसे दाखिल करने की अनुमति दी जाएगी, लेकिन जो लिखित रूप से दर्ज किए जाने के बाद नहीं होगा।

समन की तामील की तारीख से नब्बे दिन।

इस न्यायालय ने निर्देशात्मक निर्णय देते हुए कहाः

रिकॉर्ड हालांकि समय से परे दायर किया गया जैसा कि प्रदान किया गया है। दूसरा, आदेश 8 नियम 1 में निहित प्रावधान की प्रकृति प्रक्रियात्मक है। यह मूल कानून का हिस्सा नहीं है। तीसरा, आदेश 8 नियम 1 को वर्तमान रूप में प्रतिस्थापित करने के पीछे का उद्देश्य आदेश पर अंकुश लगाना है। विलम्बकारी रणनीति अपनाने वाले बेईमान प्रतिवादियों की शरारत,

त्वरित राहत के लिए अदालत का दरवाजा खटखटाने वाले वादियों और याचिकाकर्ताओं के लिए मामलों के निपटारे में देरी करना और अदालत को लगातार प्रार्थनाओं का सामना करने की गंभीर असुविधा के लिए भी

स्थगन के लिए। इसका उद्देश्य सुनवाई में तेजी लाना है न कि उसे बाधित करना। न्याय की प्रक्रिया को तेज और जल्दबाजी में किया जा सकता है लेकिन निष्पक्षता जो न्याय का एक बुनियादी तत्व है, उसे दफन करने की अनुमति नहीं दी जा सकती है।

बिहार का XXX XXX और ORS.v। बिहार राज्य भूमि विकास बैंक समिति [आर. एफ. नरीमन, जे.]

30. यह भी ध्यान दिया जाना चाहिए कि हालांकि नियम 1 आदेश 8 से जुड़े परंतुक के तहत अदालत की शक्ति "नब्बे दिनों के बाद नहीं होगी" शब्दों से सीमित है, लेकिन समय का विस्तार न होने से होने वाले परिणाम विशेष रूप से प्रदान नहीं किए गए हैं। यद्यपि उन्हें आवश्यक निहितार्थ द्वारा पढ़ा जा सकता है। केवल इसलिए कि कानून का एक प्रावधान अनिवार्य चरित्र को दर्शाने वाली नकारात्मक भाषा में है, यह अपवादों के बिना नहीं है। जब न्यायालयों को प्रावधान की प्रकृति की व्याख्या करने के लिए कहा जाता है, तो वे उस पूरे संदर्भ को ध्यान में रख सकते हैं जिसमें प्रावधान

इसे अधिनियमित किया गया, इसे निर्देशिका के रूप में रखें, हालांकि इसे नकारात्मक रूप में लिखा गया है। XXX XXX XXX

35. हमारे समक्ष निर्णय के लिए उत्पन्न होने वाले मुद्दे पर सीधा असर डालने वाले दो निर्णय हमारे संज्ञान में लाए गए हैं, जिनमें से प्रत्येक पक्ष के विद्वान वकील द्वारा लिया गया है। अपीलार्थी के विद्वान वरिष्ठ वकील ने प्रस्तुत किया कि टॉपलाइन शूज़ लिमिटेड बनाम। कॉर्प. बैंक [(2002) 6 एस. सी. सी. 33] उपभोक्ता संरक्षण अधिनियम, 1986 की धारा 13 में निहित एक समान सामग्री प्रावधान न्यायालय के विचार के लिए आया। इस प्रावधान के तहत शिकायत करने वाले विरोधी पक्ष को 30 दिनों की अवधि के भीतर या जिला मंच द्वारा दी गई 15 दिनों से अधिक की विस्तारित अवधि के भीतर मामले का अपना पक्ष देने की आवश्यकता होती है। अदालत ने विचार किया

उद्देश्यों और कारणों का विवरण और उत्तर दाखिल करने के लिए एक समय-सीमा प्रदान करने के पीछे विधायी आशय और अभिनिर्धारित किया गयाः (i) कि जैसा प्रावधान बनाया गया था वह अनिवार्य प्रकृति का नहीं था क्योंकि कोई दंडात्मक नहीं था।

विस्तारित समय 15 से अधिक होने पर परिणाम निर्धारित किए जाते हैं।

दिन, और; (ii) कि प्रावधान प्रकृति में निर्देशिका था और इसका अर्थ यह नहीं लगाया जा सकता था कि किसी भी स्थिति में प्रत्यर्थी का जवाब 45 दिनों की अवधि से आगे रिकॉर्ड पर नहीं लिया जा सकता था।

XXX XXX XXX 46. हम संक्षेप में अपने निष्कर्षों को संक्षेप में प्रस्तुत करते हैंः

XXX XXX XXX

(iv) लिखित रूप से दाखिल करने के लिए समय सारिणी प्रदान करने का उद्देश्य।

आदेश 8 नियम 1 सी. पी. सी. के तहत बयान सुनवाई में तेजी लाने के लिए है न कि सुनवाई में बाधा डालने के लिए। यह प्रावधान [2018] 7 एस. सी. आर. पर एक अक्षमता का वर्णन करता है।

प्रतिवादी। यह शक्ति पर प्रतिबंध नहीं लगाता है

समय बढ़ाने के लिए अदालत। यद्यपि नियम 1 आदेश 8 सी. पी. सी. के परंतुक की भाषा नकारात्मक रूप में है, लेकिन यह गैर-अनुपालन से आने वाले किसी भी दंडात्मक परिणाम को निर्दिष्ट नहीं करता है। प्रावधान प्रक्रियात्मक कानून के क्षेत्र में होने के कारण, इसे निर्देशिका में रखा जाना चाहिए और अनिवार्य नहीं होना चाहिए। न्यायालय की शक्ति

लिखित विवरण दाखिल करने के लिए समय को समय से आगे बढ़ाएँ। आदेश 8 नियम 1 सी. पी. सी. द्वारा प्रदान की गई अनुसूची पूरी तरह से नहीं ली गई है।

दूर।

XXX XXX "

13. इसी तरह के प्रभाव के लिए सलेम ओकेट बार एसोसिएशन बनाम में इस न्यायालय की टिप्पणियां हैं। भारत संघ, (2005) 6 एस. सी. सी. 344

ग्राफ 20, जिसे नीचे पुनः प्रस्तुत किया गया हैः

" 20. आदेश 8 नियम 1 में "होगा" शब्द का उपयोग अपने आप में यह निर्धारित करने के लिए निर्णायक नहीं है कि क्या प्रावधान अनिवार्य है या नहीं।

निर्देशिका. हमें उस उद्देश्य का पता लगाना होगा जिसे इस प्रावधान द्वारा पूरा करने की आवश्यकता है और इसकी रूपरेखा और संदर्भ जिसमें इसे अधिनियमित किया गया है। "होगा" शब्द का उपयोग आमतौर पर प्रावधान की अनिवार्य प्रकृति का संकेत है, लेकिन संदर्भ को ध्यान में रखते हुए।

जिस में इसका उपयोग किया जाता है या कानून के इरादे को ध्यान में रखते हुए, उसी को निर्देशिका के रूप में माना जा सकता है। विचाराधीन नियम को न्याय के उद्देश्य को आगे बढ़ाना होगा न कि उसे हराना होगा। प्रक्रिया के नियम न्याय के उद्देश्य को आगे बढ़ाने के लिए बनाए जाते हैं न कि उसे पराजित करने के लिए। नियम या प्रक्रिया का निर्माण जो बढ़ावा देता है

न्याय और गर्भपात को रोकने को प्राथमिकता दी जानी चाहिए। प्रक्रिया के नियम न्याय की दासी हैं न कि उसकी मालकिन। वर्तमान संदर्भ में, सख्त व्याख्या न्याय को पराजित करेगी।

14. हालांकि, एक विसंगत टिप्पणी को एक निर्णय दिनांकित द्वारा मारा गया था

2.2015 , न्यू इंडिया एस्योरेंस कंपनी लिमिटेड बनाम में रिपोर्ट की गई। हिल्ली

पर्पस कोल्ड स्टोरेज प्रा. लि. लिमिटेड (2015) 16 एस. सी. सी. 20. न्यायाधीशों की पीठ ने जे. जे. मर्चेंट बनाम के फैसले को पुनर्जीवित किया। श्रीनाथ चतुर्वेदी (2002) 6 एस. सी. सी. 635। जे. जे. मर्चेंट (ऊपर) कैलाश (ऊपर) में इस प्रकार सूचीबद्ध हैंः

" 38. दूसरी ओर, प्रत्यर्थी के विद्वान वकील ने जे. जे. मर्चेंट (डॉ.) बनाम में इस न्यायालय के तीन न्यायाधीशों की पीठ के फैसले की ओर हमारा ध्यान आकर्षित किया। श्रीनाथ चतुर्वेदी [(2002) 6 एस. सी. सी. 635] जिसमें हमें बिहार के आदेश 8 नियम 1 सी. पी. सी. राज्य और ORS.v का संदर्भ मिलता है।

इसके पैरा 14 और 15 के अनुसार और न्यायालय ने कहा है कि कानून के अधिदेश का सख्ती से पालन किया जाना आवश्यक है। निर्णय को ध्यानपूर्वक पढ़ने से पता चलता है कि आदेश 8 के प्रावधान

नियम 1 सी. पी. सी. सीधे न्यायालय के समक्ष विचार के लिए उत्पन्न नहीं हुआ था और उस हद तक न्यायालय द्वारा की गई टिप्पणियां बाध्यकारी हैं। इसके अलावा, टॉपलाइन शूज लिमिटेड मामले [(2002) 6 एस. सी. सी. 33] में इस अदालत के पहले के फैसले पर अदालत का ध्यान नहीं आकर्षित किया गया था।

इस अवलोकन के बावजूद, न्यू इंडिया एस्योरेंस कंपनी। लिमिटेड (ऊपर) ने जे. जे. मर्चेंट (ऊपर) में फैसले का पालन किया और कहाः

" 25. इसलिए, हमारा विचार है कि जे. जे. मर्चेंट [जे. जे. मर्चेंट बनाम। श्रीनाथ चतुर्वेदी, (2002) 6 एस. सी. सी. 635] मैदान में है और इसलिए, हम इस विचार को दोहराते हैं कि जिला मंच इसके लिए 15 दिनों की और अवधि दे सकता है।

विरोधी पक्ष को अपना पक्ष दर्ज करने या जवाब देने के लिए और उससे आगे नहीं।

26. जे. जे. मर्चेंट (उपरोक्त) में निर्धारित कानून का पालन करने का एक और कारण है। जे. जे. मर्चेंट (ऊपर) का फैसला 2002 में किया गया था, जबकि कैलाश (बनाम कैलाश)। नन्हकू, (2005) 4 एस. सी. सी. 480] 2005 में तय किया गया था। इस न्यायालय द्वारा निर्धारित कानून के अनुसार, कैलाश (ऊपर) का निर्णय लेते समय, इस न्यायालय को जे. जे. मर्चेंट (ऊपर) में व्यक्त विचार का सम्मान करना चाहिए था क्योंकि जे. जे. मर्चेंट (ऊपर) में दिया गया निर्णय समय से पहले का था। वनाच्छादित कानूनी स्थिति को हम नजरअंदाज नहीं कर सकते हैं और इसलिए, हमारी राय है कि जे. जे. मर्चेंट (उपरोक्त) में व्यक्त विचार को नजरअंदाज किया जाना चाहिए।

पालन किया जाए "।

15. जे. जे. मर्चेंट (उपरोक्त) एक विविध याचिका से उत्पन्न हुआ जो राष्ट्रीय उपभोक्ता विवाद निवारण के समक्ष दायर की गई थी। आयोग, प्रार्थना करता है कि कथित चिकित्सा लापरवाही के लिए दायर शिकायत पर दीवानी न्यायालय द्वारा निर्णय लिया जाए, क्योंकि कानून के जटिल प्रश्न उत्पन्न होते हैं। उक्त डॉक्टरों के खिलाफ आपराधिक मुकदमा भी लंबित था। फैसले के पैराग्राफ 4 में, अदालत ने कहा कि उन मामलों के प्रकार के संबंध में कुछ दिशानिर्देश निर्धारित करने की आवश्यकता है जिन पर उपभोक्ता मंच विचार नहीं करेगा। यह देखने के बाद कि शिकायत के निपटारे में लगभग नौ साल की अत्यधिक देरी हुई थी, इस अदालत ने महसूस किया कि इस तरह की देरी शिकायत को अस्वीकार करने और शिकायतकर्ता को दीवानी अदालत का दरवाजा खटखटाने का निर्देश देने का आधार नहीं होगी।

8] 7 एस. सी. आर. का जवाब देते हुए।

तर्क है कि तथ्य के जटिल प्रश्नों का निर्णय नहीं किया जा सकता है संक्षिप्त कार्यवाही, इस न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया कि त्वरित सुनवाई का अर्थ यह नहीं है कि

कि न्याय तब नहीं किया जा सकता जब तथ्य के प्रश्नों से निपटा जाना हो और निर्णय लिया जाना हो। त्वरित सुनवाई के इस संदर्भ में न्यायालय ने लिखित बयान प्रस्तुत करने में 45 दिनों से अधिक का समय नहीं देने के विधायी जनादेश के बारे में टिप्पणी की। वास्तव में, न्यायालय इस तथ्य से अवगत था कि शिकायतों, अपीलों और संशोधनों के निपटारे के लिए अपरिवर्तित उपभोक्ता संरक्षण अधिनियम, 1986 के तहत कोई समय सीमा नहीं थी। अतः इस न्यायालय ने कहाः

" 23. बकाया राशि को कम करने और यह देखने के लिए कि शिकायतों, अपीलों और संशोधनों पर तेजी से और निर्धारित समय के भीतर निर्णय लिया जाए, हम उम्मीद करते हैं कि राष्ट्रीय आयोग के अध्यक्ष

निर्धारित समय के भीतर उचित कार्रवाई करने के लिए सरकार का ध्यान आकर्षित करें और देखें कि

अधिनियम हतोत्साहित नहीं है।

XXX XXX XXX

25. यह आशा की जा सकती है कि राष्ट्रीय आयोग यह सुनिश्चित करेगा कि जिला मंच, राज्य आयोग और राष्ट्रीय आयोग अधिनियम के प्रावधानों के अनुसार अपने कार्यों का कुशलता और तेजी से निर्वहन कर सकें। राष्ट्रीय आयोग के पास अन्य बातों के साथ-साथ सभी राज्य आयोगों के बारे में निर्देश जारी करने के लिए प्रशासनिक नियंत्रण है।
मामलों आदि की सुनवाई में एक समान प्रक्रिया को अपनाना। इसकी देखरेख में प्रशासनिक नियंत्रण भी होगा कि

राज्य आयोगों या जिला मंचों के कार्यों का निर्वहन अधिनियम के उद्देश्यों और उद्देश्यों को आगे बढ़ाने के लिए किया जाता है

सबसे अच्छे तरीके से "।

न्यायालय ने तब उपभोक्ता संरक्षण (संशोधन) विधेयक, 2002 का उल्लेख किया, जिसमें अधिनियम की धारा 13 में उप-धारा (3-ए) को शामिल करने की परिकल्पना की गई थी, जो निम्नानुसार हैः

“ 30. ... .

" 13. (3 - क) प्रत्येक शिकायत की सुनवाई जितनी जल्दी हो सके की जाएगी और विरोधी पक्ष द्वारा नोटिस प्राप्त होने की तारीख से तीन महीने की अवधि के भीतर शिकायत पर निर्णय लेने का प्रयास किया जाएगा, जहां शिकायत के लिए वस्तुओं के विश्लेषण या परीक्षण की आवश्यकता नहीं है और पांच महीने के भीतर यदि इसके लिए वस्तुओं के विश्लेषण या परीक्षण की आवश्यकता हैः

बशर्ते कि सामान्य रूप से कोई स्थगन नहीं दिया जाएगा जिला मंच जब तक कि पर्याप्त कारण नहीं दिखाया जाता है और

फोरम द्वाराः

बशर्ते कि जिला मंच ऐसे आदेश देगा

स्थगन के कारण होने वाली लागतों के बारे में, जो भी हो सके,

इस अधिनियम के तहत बनाए गए विनियमों में प्रावधान किया गया है।

(मूल में जोर)

31. उपरोक्त खंड के शब्दों से यह स्पष्ट है कि जिला फोरम के लिए विधायी जनादेश है या

जहाँ तक संभव हो शिकायतों का निपटारा करने के लिए आयोग

कड़ाई से पालन करके तीन महीने का निर्धारित समय

अधिनियम के तहत निर्धारित प्रक्रिया। विरोधी पक्ष को करना होगा

प्राप्ति की तारीख से 30 दिनों के भीतर अपना संस्करण प्रस्तुत करें

उसके और आयोग की शिकायत अधिक से अधिक दे सकती है।

कुछ अपरिहार्य कारणों से इसके संस्करण को दाखिल करने के लिए और 15 दिन।

इसलिए, न्यायालय इस तथ्य के लिए जीवित था कि कोई परिणाम नहीं है

तीन महीने की समय सीमा का पालन न करने के लिए निर्धारित। परिणामस्वरूप, उपभोक्ता संरक्षण अधिनियम, 1986 के तहत कार्यवाही के निपटारे में देरी से बचने के लिए कुछ निर्देशों के साथ मामले का निपटारा किया गया।

16. इस प्रकार यह देखा जाएगा कि इसमें कोई केंद्रित तर्क नहीं था

जे. जे. मर्चेंट (ऊपर) ने इस बात पर कि क्या उपभोक्ता संरक्षण अधिनियम, 1986 की धारा 13 (2) (ए) के प्रावधानों को निर्देशिका माना जा सकता है, 45 दिनों से अधिक लिखित बयान दाखिल करने के लिए कोई परिणाम प्रदान नहीं किया गया था। वास्तव में, टॉपलाइन शूज़ (उपरोक्त) में इस न्यायालय के फैसले का जे. जे. की सुनवाई करने वाली पीठ के समक्ष उल्लेख भी नहीं किया गया था।

व्यापारी (ऊपर)।

17. मामले के इस दृष्टिकोण में, इसकी सराहना करना थोड़ा मुश्किल है

कैसे कैलाश (ऊपर) में तीन न्यायाधीशों की पीठ को जे. जे. मर्चेंट में आदेश VIII नियम 1, सी. पी. सी. के एक आज्ञाकारी कथन का सम्मान करना चाहिए था।

(ऊपर)। दुर्भाग्य से, न्यू इंडिया एस्योरेंस कंपनी लिमिटेड (ऊपर) में जो छूट गया वह कैलाश (ऊपर) का अनुच्छेद 38 है जिसे यहाँ ऊपर निकाला गया है। यह तथ्य कि जे. जे. मर्चेंट (ऊपर) में तीन न्यायाधीशों की पीठ के समक्ष टॉपलाइन शूज़ (ऊपर) का उल्लेख नहीं किया गया था, जैसा कि कैलाश (ऊपर) के पैराग्राफ 38 में अभिनिर्धारित किया गया है, उपरोक्त निर्णय को उपभोक्ता संरक्षण अधिनियम, 1986 की धारा 13 (2) (ए) पर कमजोर बना देगा, जिसे अनिवार्य माना जा रहा है। इससे पहले का फैसला [2018] 7 एस. सी. आर. नहीं हो सकता है।

जिन कारणों पर यह आधारित है, उन्हें परेशान किए बिना उप-मौन को खारिज कर दिया। जे जे। मर्चेंट (ऊपर) टॉपलाइन शूज़ (ऊपर) अनुपात से संबंधित नहीं है-अर्थात्, 15 दिनों के विस्तारित समय को पार करने की स्थिति में कोई दंडात्मक परिणाम प्रदान नहीं किया गया था; इसलिए, दावेदार के पक्ष में कोई ठोस अधिकार अर्जित नहीं किया गया था; और अधिनियम के उद्देश्यों और कारणों के विवरण में यह भी प्रावधान किया गया था कि प्राकृतिक न्याय के सिद्धांतों को ध्यान में रखा जाए। न्यू इंडिया एस्योरेंस कंपनी लिमिटेड (ऊपर) के फैसले में कैलाश (ऊपर) के पैराग्राफ 38 का उल्लेख नहीं किया गया था या जे. जे.

मर्चेंट (ऊपर) को इस आधार पर सही ढंग से अलग किया गया था कि आदेश VIII नियम 1, सी. पी. सी. सीधे जे. जे. मर्चेंट (ऊपर) में विचार के लिए उत्पन्न नहीं हुआ था। जे. जे. मर्चेंट (ऊपर) के अनुच्छेद 14 और 15 में आदेश VIII नियम 1, सी. पी. सी. पर टिप्पणियों को उचित रूप से आज्ञाकारी आदेश की प्रकृति में माना गया था, और इसलिए, कैलाश (ऊपर) की तीन न्यायाधीशों की पीठ पर बाध्यकारी नहीं था। जहाँ तक कैलाश (ऊपर) का संबंध है, यह आदेश VIII नियम 1, सी. पी. सी. के प्रभाव पर एक बाध्यकारी निर्णय है, जिसके तर्क की पुष्टि सलेम बार एसोसिएशन (ऊपर) में तीन न्यायाधीशों की पीठ ने की है।

18. राज्य में वी। एन. एस. गणेशन, (2013) 3 एस. सी. सी. 594, यह न्यायालय इस बात से संबंधित था कि क्या दंड संहिता की धारा 154 (2) प्रक्रिया, 1973 अनिवार्य या निर्देशिका थी। उक्त खंड इस प्रकार हैः

" 154. संज्ञेय मामलों में जानकारी।

XXX XXX XXX

(2) उप-धारा (1) के तहत दर्ज की गई जानकारी की एक प्रति सूचना देने वाले को तुरंत मुफ्त में दी जाएगी।

प्रावधान में उपयोग की गई भाषा की अनिवार्य प्रकृति के बावजूद, धारा का उल्लंघन होने पर कोई परिणाम प्रदान नहीं किया गया था। यह न्यायालय

कई निर्णयों का उल्लेख किया गया है जो यह निर्धारित करने के लिए परीक्षण निर्धारित करते हैं कि क्या कोई प्रावधान अनिवार्य है या निर्देशिका, और फिर यह अभिनिर्धारित किया कि धारा 154 (2) निर्देशिका थी।

इस मामले में, इस न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया कि भारत सरकार अधिनियम, 1935 की धारा 175 (3) में निहित प्रावधान, जिसके लिए आवश्यक है कि भारत सरकार की ओर से अनुबंधों को निर्धारित प्रपत्र में निष्पादित किया जाएगा, यह प्रकृति में अनिवार्य था, इस तथ्य के बावजूद कि धारा ने गैर-अनुपालन के लिए कोई परिणाम निर्धारित नहीं किया था। इस न्यायालय ने बिहार और ORS.v के एक निर्देशात्मक राज्य का उल्लेख किया।

क़ानूनों की व्याख्या पर मैक्सवेल में अनुच्छेद, 10 वीं संस्करण, पी। 376 , इस प्रकार हैः

अधिनियम के वास्तविक उद्देश्य और उद्देश्य को बढ़ावा देना, जैसे कि इरादे का श्रेय विधायिका को नहीं दिया जाना चाहिए। पूरा दायरा

और विचाराधीन क़ानून के उद्देश्य पर विचार किया जाना चाहिए। 1.

इसके बाद यह माना गया कि यह प्रावधान आम जनता के हित में था क्योंकि सवाल यह है कि क्या एक बाध्यकारी अनुबंध किया गया है।

राज्य और निजी व्यक्ति के बीच किए गए कार्यों को नहीं छोड़ा जाना चाहिए। विवाद और मुकदमेबाजी के लिए खुला। हमें यह नहीं भूलना चाहिए कि जैसा कि निर्धारित किया गया है

20. इस प्रकार यह देखा जाएगा कि धारा 34 (5) इसका पालन न करने को माफ करने की न्यायालय की शक्ति से संबंधित नहीं है। यह है। यह ध्यान रखना अनिवार्य है कि प्रावधान प्रक्रियात्मक है, जिसके पीछे का उद्देश्य धारा 34 के तहत आवेदनों का तेजी से निपटान करना है। कैलाश (उपरोक्त) में निहित विवेकपूर्ण अवलोकन को याद रखना चाहिए, जहां इस तरह के प्रावधान का उद्देश्य केवल सुनवाई में तेजी लाना है और इसे रोकना नहीं है। प्रक्रिया के सभी नियम न्याय के सहायक होते हैं और यदि न्याय के उद्देश्य को आगे बढ़ाने में यह स्पष्ट किया जाता है कि इस तरह के प्रावधान को निर्देशिका के रूप में माना जाना चाहिए, तो ऐसा ही हो।

21. सी. पी. सी. की धारा 80 का मामला लीजिए। उक्त प्रावधान के तहत, प्रिवी काउंसिल और फिर हमारे न्यायालय ने लगातार यह विचार रखा है कि सरकार के खिलाफ मुकदमा वैध रूप से दायर नहीं किया जा सकता है

1 बिखराज जयपुरिया बनाम। भारत संघ, (1962) 2 एस. सी. आर. 880, पैरा 16।

लिखित सूचना संबंधित पक्षों को उक्त धारा द्वारा निर्धारित तरीके से दिए जाने के दो महीने की समाप्ति के बाद तक। यदि ऐसा मुकदमा या तो इस तरह की सूचना के बिना या उक्त दो महीने की अवधि समाप्त होने से पहले दायर किया जाता है, तो इस तरह के मुकदमे को खारिज कर दिया जाना चाहिए क्योंकि यह विचारणीय नहीं है। इसका कारण बिहारी में सम्मानजनक रूप से बताया गया है। चौधरी और अन्न। वी. बिहार राज्य और अन्य। , (1984) 2 एस. सी. सी. 627, निम्नानुसार हैः

" 3. ..... जब हम धारा की योजना की जांच करते हैं तो यह स्पष्ट हो जाता है कि धारा को सार्वजनिक करने के उपाय के रूप में अधिनियमित किया गया है।

यह सुनिश्चित करने के उद्देश्य से नीति कि सरकार या किसी लोक अधिकारी के खिलाफ मुकदमा दायर करने से पहले, सरकार या संबंधित अधिकारी को उस दावे की जांच करने का अवसर दिया जाए, जिसके संबंध में मुकदमा दायर करने का प्रस्ताव है और यदि यह एक न्यायसंगत दावा पाया जाता है, तो तत्काल कार्रवाई करें और इस तरह अनावश्यक मुकदमेबाजी से बचें और सार्वजनिक समय और धन की बचत करें, बिना उस व्यक्ति को प्रेरित किए, जिसने नोटिस जारी किया है, जिसमें काफी खर्च और देरी शामिल है। निजी पक्षों के विपरीत, सरकार से अपेक्षा की जाती है कि वह ऐसी कानूनी सलाह प्राप्त करने के बाद, जो वे उचित समझते हैं, सूचना के दायरे में आने वाले मामले पर सबसे अधिक वस्तुनिष्ठ तरीके से विचार करे और धारा द्वारा अनुमत दो महीने की अवधि के भीतर सार्वजनिक हित में निर्णय ले कि क्या दावा न्यायसंगत और उचित है और इसलिए, विचार किए गए मुकदमे को त्वरित बातचीत और निपटान द्वारा टाला जाना चाहिए या क्या दावा किया जाना चाहिए।
यदि और कब मुकदमा दायर किया जाता है तो उससे लड़कर विरोध किया जाए। धारा में निहित अनिवार्य प्रावधान में स्पष्ट रूप से एक सार्वजनिक उद्देश्य अंतर्निहित है जो प्रस्तावित मुकदमे के विवरणों को निर्धारित करते हुए एक नोटिस जारी करने पर जोर देता है और सरकार या एक लोक अधिकारी को उनके खिलाफ मुकदमा दायर करने से पहले दो महीने का समय देता है। खंड का उद्देश्य प्रगति है

न्याय और बचाव द्वारा सार्वजनिक भलाई की सुरक्षा

अनावश्यक मुकदमेबाजी "।

22. धारा 80, हालांकि एक प्रक्रियात्मक प्रावधान है, को अनिवार्य माना गया है क्योंकि इसकी कल्पना जनहित, सार्वजनिक उद्देश्य में की गई है।

इसके अंतर्गत सरकार को उस व्यक्ति को प्रेरित किए बिना एक न्यायसंगत दावे को निपटाने के लिए जांच करने और तत्काल कार्रवाई करने का अवसर देकर न्याय की प्रगति है जिसने एक नोटिस जारी किया है जिसमें काफी खर्च और देरी से जुड़ा मुकदमा स्थापित करना है।

यह बिहार राज्य और ORS.v होना चाहिए। बिहार राज्य भूमि विकास बैंक समिति [आर. एफ. नरीमन, जे.]

धारा 34 (5) के विपरीत, एक प्रक्रियात्मक प्रावधान भी है, जिसका उल्लंघन कोई परिणाम नहीं देता है। इस तरह के प्रावधान को अनिवार्य समझने से न्याय की प्रगति विफल हो जाएगी क्योंकि यह धारा 34 (5) की आवश्यकताओं का पालन किए बिना दायर आवेदन को खारिज करने का परिणाम प्रदान करेगा, जिससे निष्पक्षता के तत्व को दफन करके न्याय की प्रक्रिया में बाधा आएगी।

23. हालांकि, श्री त्रिपाठी के अनुसार, धारा 34 के तहत दायर एक आवेदन एक शर्त पूर्ववर्ती है, और यदि दूसरे पक्ष को कोई पूर्व सूचना जारी नहीं की जाती है, तो आवेदक द्वारा उक्त आवश्यकता के अनुपालन का समर्थन करने वाले एक हलफनामे के साथ, इस तरह के आवेदन को धारा 34 (3) में उल्लिखित 120 दिनों की अवधि के अंत में खारिज करना होगा। इसके अलावा जो हमारे द्वारा ऊपर कहा गया है, अन्यथा भी, धारा 34 के एक सादे पठन पर, इसका पालन नहीं होता है। धारा 34 (1) निम्नानुसार हैः

" 34. मध्यस्थता पुरस्कार को अलग रखने के लिए आवेदन। — (1) एक मध्यस्थता पुरस्कार के खिलाफ एक अदालत का सहारा केवल इस तरह के पुरस्कार को अलग करने के लिए एक आवेदन द्वारा किया जा सकता है

उप धारा (2) और उप धारा (3)। ”

इसकी अनुपस्थिति से उप-धारा (5) का कोई भी संदर्भ स्पष्ट है। धारा 34 (1) में एकमात्र आवश्यकता यह है कि पुरस्कार को अलग करने के लिए आवेदन उप-धारा (2) और (3) के अनुसार होना चाहिए। यह, फिर से, इस तथ्य का एक महत्वपूर्ण संकेत है कि विधायी रूप से भी,

धारा (5) एक पूर्ववर्ती शर्त नहीं है, बल्कि एक प्रक्रियात्मक प्रावधान है जो धारा 34 के तहत आवेदनों पर निर्णय लेने में देरी को कम करने का प्रयास करता है। एक और दिलचस्प बात ध्यान देने योग्य है-वही संशोधन अधिनियम एक नई धारा 29 ए में लाया गया। इस प्रावधान में कहा गया हैः

" 29 ए. मध्यस्थता पुरस्कार के लिए समय सीमा। — (1) पुरस्कार मध्यस्थता की तारीख से बारह महीने की अवधि के भीतर दिया जाएगा।

न्यायाधिकरण संदर्भ पर प्रवेश करता है।

जिस तारीख को मध्यस्थ या सभी मध्यस्थों को, जैसा भी मामला हो, उनकी नियुक्ति की लिखित सूचना मिली है। (2) यदि निर्णय मध्यस्थता न्यायाधिकरण द्वारा निर्देश दिए जाने की तारीख से छह महीने की अवधि के भीतर दिया जाता है, तो मध्यस्थता न्यायाधिकरण अतिरिक्त शुल्क की ऐसी राशि प्राप्त करने का हकदार होगा।

जैसा कि पक्षकार सहमत हो सकते हैं।

(3) पक्षकार सहमति से उप-धारा (1) में निर्दिष्ट अवधि को छह महीने से अधिक की अवधि के लिए बढ़ा सकते हैं।

(4) यदि अधिनिर्णय उप-धारा (1) में विनिर्दिष्ट अवधि या उप-धारा (3) के तहत विनिर्दिष्ट विस्तारित अवधि के भीतर नहीं किया जाता है, तो मध्यस्थ (ओं) का अधिदेश तब तक समाप्त हो जाएगा जब तक कि न्यायालय ने अवधि की समाप्ति से पहले या बाद में ऐसा नहीं किया हो। निर्दिष्ट, अवधि बढ़ाई गईः

बशर्ते कि इस उप-धारा के तहत अवधि का विस्तार करते समय, यदि न्यायालय को पता चलता है कि मध्यस्थता न्यायाधिकरण के कारण कार्यवाही में देरी हुई है, तो वह मध्यस्थ (ओं) की फीस में पांच प्रतिशत से अधिक की कमी का आदेश दे सकता है।

इस तरह की देरी के प्रत्येक महीने के लिए।

24. इस प्रावधान से यह देखा जाएगा कि धारा 34 (5) और (6) के विपरीत, यदि कोई पुरस्कार निर्धारित या विस्तारित अवधि से अधिक दिया जाता है।

धारा में निहित, मध्यस्थ के अधिदेश को समाप्त किए जाने का परिणाम स्पष्ट रूप से प्रदान किया गया है। यह प्रावधान इसके बिल्कुल विपरीत है। धारा 34 (5) और (6) जहां, जैसा कि ऊपर कहा गया है, यदि धारा 34 के तहत आवेदन पर निर्णय लेने की अवधि समाप्त हो गई है,

परिणाम प्रदान किया जाता है। यह एक और संकेत है कि

संशोधन अधिनियम, जब इसने विभिन्न स्थितियों में समय अवधि प्रदान की, तो ऐसा विभिन्न परिणामों के इरादे से किया गया।

25. श्री त्रिपाठी ने तब तर्क दिया कि धारा 34 (5) धारा 34 (6) से स्वतंत्र है और अपने आप में कानून की एक अनिवार्य आवश्यकता है। इसके दो जवाब हैं। पहला यह है कि उप-धारा (6) उस तारीख को संदर्भित करती है जिस दिन उप-धारा (5) में निर्दिष्ट सूचना दूसरे पक्ष को दी जाती है। यही कारण है कि आवेदन दाखिल करने की पूर्व तिथि धारा 34 (6) में निर्दिष्ट एक वर्ष की अवधि का प्रारंभिक बिंदु होना चाहिए। इसलिए धारा 34 (6) की स्पष्ट भाषा श्री त्रिपाठी के इस समर्पण के खिलाफ है। दूसरा, भले ही उप-धारा (5) को उप-धारा (6) से स्वतंत्र प्रावधान माना जाए, कानून में वही परिणाम परिणाम है-अर्थात्, यदि ऐसी पूर्व सूचना जारी नहीं की जाती है तो कोई परिणाम प्रदान नहीं किया जाता है। यह प्रस्तुति

इसलिए असफल होना चाहिए।

26. अब हम उच्च न्यायालय के कुछ फैसलों पर आते हैं। द.

पटना, 2 केरल, 3 हिमाचल प्रदेश, 4 दिल्ली, 3 और गुवाहाटी के उच्च न्यायालयों ने यह विचार व्यक्त किया है कि धारा 34 (5) प्रकृति में अनिवार्य है। जिस पर दृढ़ता से भरोसा किया जाता है वह वह उद्देश्य है जिसे धारा 34 (5) में उपयोग की गई भाषा की अनिवार्य प्रकृति के साथ प्रावधान द्वारा प्राप्त किया जाना चाहिए। समान रूप से, समान परिणाम तक पहुंचने के लिए धारा 80, सी. पी. सी. के साथ समानताएं खींची गई हैं। दूसरी ओर, ग्लोबल एविएशन सर्विसेज प्राइवेट लिमिटेड बनाम। भारतीय विमानपत्तन प्राधिकरण, बॉम्बे उच्च न्यायालय ने अपने द्वारा पूछे गए प्रश्न 4 का उत्तर देते हुए, हमारे कुछ निर्णयों का पालन करते हुए कहा कि प्रावधान निर्देशिका है, मुख्य रूप से क्योंकि निर्दिष्ट समय सीमा के उल्लंघन के लिए कोई परिणाम प्रदान नहीं किया गया है। जब इस तर्क का सामना किया जाता है कि प्रावधान का उद्देश्य अनुचित हो जाएगा यदि यह बंबई उच्च न्यायालय के विद्वान एकल न्यायाधीश ने निम्नलिखित रूप में अभिनिर्धारित किया कि उन्हें निर्देशिका के रूप में माना जाना थाः

" 133. जहाँ तक विद्वान वकील की प्रस्तुति का संबंध है प्रत्यर्थी ने कहा कि यदि धारा 34 (5) को निर्देशिका माना जाता है, तो संशोधनों का पूरा उद्देश्य अनुचित होगा

संबंधित, मेरे विचार में, इस प्रस्तुतिकरण में कोई योग्यता नहीं है

अनिवार्य है। के साथ आगे बढ़ने में किसी भी देरी से बचने का उद्देश्य मामले को पहले से ही सम्मिलन द्वारा शीघ्रता से पूरा किया जाता है

बॉम्बे उच्च न्यायालय (मूल पक्ष) नियमों में उपयुक्त नियम। द. अदालत हमेशा याचिकाकर्ता को नोटिस जारी करने का निर्देश दे सकती है

पूर्व जारी करने के गैर-अनुपालन के लिए नहीं लिया जा सकता है मध्यस्थता याचिका दायर करने से पहले नोटिस।

2 बिहार राज्य भूमि विकास बैंक समिति बनाम। बिहार राज्य और अन्य। , एल. पी. ए. सं. 1841

2016 2016 के C.W.J.C. संख्या 746 में [28.10.2016 पर तय किया गया]।

3 शम्सुद्दीन बनाम। श्रीराम ट्रांसपोर्ट फाइनेंस कंपनी लिमिटेड, अरब। 2016 का ए. नंबर 49 [तय किया गया]

16.02.2017] पर।

4 माधव हाइटेक इंजीनियर्स प्रा. लिमिटेड वी. कार्यकारी अभियंता और अन्य। , ओम. पी.

(एम) 2016 का नंबर 48 [24.08.2017 पर तय किया गया]।

5 मशीन टूल (इंडिया) लिमिटेड बनाम स्प्लेंडर बिल्डवेल प्रा. लिमिटेड और ओआरएस। , ओम. पी. (कॉम.)

199-200 2018 का [29.05.2018 पर तय किया गया]।

6 भारत संघ और ओआरएस। वी. दुर्गा कृष्णा स्टोर प्रा. लिमिटेड, अरब। ए. 2018 का 1 [तय किया गया]

31.05.2018] पर।

7 2017 की वाणिज्यिक मध्यस्थता याचिका संख्या 434 [21.02.2018 पर निर्णय लिया गया]।

18] 7 एस सी आर।

सर्वोच्च न्यायालय की रिपोर्ट

उपरोक्त निर्णय के बाद बॉम्बे और कलकत्ता के उच्च न्यायालयों के हालिया निर्णय आए हैं।

27. हमारी राय है कि बॉम्बे और कलकत्ता के उच्च न्यायालयों द्वारा प्रस्तावित दृष्टिकोण कानून की सही स्थिति का प्रतिनिधित्व करता है।

28. हम यह भी जोड़ सकते हैं कि वाणिज्यिक न्यायालयों की धारा 14 के साथ पठित धारा 10 के अंतर्गत आने वाले मामलों में, वाणिज्यिक प्रभाग और उच्च न्यायालय अधिनियम, 2015 का वाणिज्यिक अपीलीय प्रभाग, वाणिज्यिक अपीलीय प्रभाग निर्धारित छह महीने के भीतर उसके समक्ष दायर अपीलों का निपटारा करने का प्रयास करेगा। जिन अपीलों को इस तरह से शामिल नहीं किया गया है, उनका भी यथासंभव शीघ्रता से निपटान किया जाएगा, अधिमानतः उस तारीख के भीतर जिस दिन अपील दायर की गई है। वर्तमान अपील के रूप में

धारा 34 (5) को निर्देशिका माने जाने पर हमने डिवीजन बेंच के समक्ष लेटर्स पेटेंट अपील की रखरखाव की श्री राय की वैकल्पिक याचिका पर निर्णय लेना आवश्यक नहीं पाया है। 29. नतीजतन, अपील की अनुमति दी जाती है और पटना उच्च न्यायालय के फैसले को दरकिनार कर दिया जाता है। वर्तमान मामले में दायर की गई धारा 34 याचिका का अब उसके गुण-दोष के आधार पर निपटारा किया जाएगा।

अपील की अनुमति दी गई।

कल्पना के. त्रिपाठी

8 महाराष्ट्र राज्य सड़क विकास निगम लिमिटेड बनाम सिम्प्लेक्स गायत्री कंसोर्टियम और ओआरएस। , 2017 की वाणिज्यिक मध्यस्थता याचिका संख्या 453 [19.04.2018 पर निर्णय लिया गया]। 9 9 श्रेई इन्फ्रास्ट्रक्चर फाइनेंस लिमिटेड बनाम। कैंडोर गुड़गांव दो विकासकर्ता और परियोजनाएँ

प्रा. लिमिटेड, 2018 का ए. पी. सं. 346 [12.07.2018 पर तय किया गया]।